भारतीय ज्ञान परंपरा में शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

सम्पादक :
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

भारतीय ज्ञान परम्परा में शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,
अजमेर

छवि पब्लिकेशन्स

अजमेर-305001

प्रकाशक :
छवि पब्लिकेशन्स
अजमेर-305001
मो. 9660111549

संस्करण :
प्रथम 2024

ISBN : 978 - 81 - 89435 - 66 - 0

मूल्य - 300/-

रचना - भारतीय ज्ञान परम्परा में शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

ब्राह्मण ग्रन्थों में नारी की स्थिति और शिक्षा के अधिकार

राजीव कुमार शर्मा
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

'ब्राह्मण' शब्द ब्रह्म से उत्पन्न हुआ है और इसका अर्थ केवल मन्त्र और यज्ञ तक सीमित नहीं है। जो ग्रंथ वैदिक मन्त्रों की व्याख्या करते हैं, यज्ञों की विधि और अनुष्ठान प्रस्तुत करते हैं, उन्हें ही ब्राह्मण कहा गया। इन ग्रंथों का मुख्य विषय यज्ञ है और इनमें याज्ञिक कर्मकाण्ड, वैदिक मन्त्रों की व्याख्या तथा यज्ञों का वैज्ञानिक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक विवेचन शामिल है।

ब्राह्मण ग्रंथों का समय वेद के परवर्ती काल में माना जाता है, जब कर्मकाण्डों का विस्तार हुआ और यज्ञ में स्त्री की सहभागिता निश्चित हुई। इस काल में धार्मिक और सामाजिक कृत्यों के लिए स्त्रियों की अनिवार्यता स्वीकार की गई।

'ब्राह्मण' शब्द में तद्धित 'अण्' प्रत्यय लगने से यह नाम बना और विद्वानों ने इसे प्रार्थना एवं उपासना के अर्थ से भी जोड़ा। ब्राह्मणकालीन समाज पितृसत्तात्मक था, जहाँ पिता परिवार के मुखिया और संरक्षक होते थे। इसके बावजूद ब्राह्मण ग्रंथों में नारी को यज्ञ, शिक्षा और धार्मिक कर्मकाण्ड में सक्रिय और सम्मानित भूमिका प्राप्त थी।

परिवार माता-पिता, पति-पत्नी, भाई-बहन और बच्चों के मेल से बनता है। पं. हरिदत्त वेदालंकार के अनुसार परिवार मानव जीवन में आत्म-सुरक्षा, वंश बढ़ाने और सामाजिक जीवन को बनाए रखने का मुख्य माध्यम है। समाज में इंसान की कई जरूरतें होती हैं, जैसे इच्छा की पूर्ति, बच्चों का जन्म और उनकी देखभाल, जो परिवार के बिना पूरी नहीं हो सकती। इसी वजह से परिवार का अस्तित्व और विकास हुआ।

ब्राह्मण ग्रंथों के समय से पहले 'कुल' शब्द का प्रयोग यौगिक अर्थ में नहीं हुआ था। 'कुल' शब्द घर या परिवार के निवास और घर से ही संबंधित था और यह स्वयं परिवार का प्रतीक माना जाता था। शतपथ ब्राह्मण में यजमान के परिवार की लंबी आयु के लिए प्रार्थना करते हुए कहा गया है: 'अश्वत्थ में तुम्हारा घर है, पर्ण में तुम्हारी वसति है।' विवाह के माध्यम से परिवार का निर्माण होता है और इंसान अपनी संतानों

के जरिए अपना वंश बढ़ाता, उसे लंबा करता और अमर बनाता है।

ब्राह्मण युग में कुछ परिवार टूटने लगे थे, क्योंकि संयुक्त परिवारों में महिलाओं का पूर्ण स्वाधिकार नहीं रहता था और उन्हें अपनी संतान को सुखपूर्वक पालने में कठिनाई होती थी। इसके बावजूद, वैदिक काल की संयुक्त परिवार व्यवस्था अधिकतर समाज में अभी भी बनी हुई थी।

ब्राह्मणकालीन समाज में बच्चों के लिए 'संतति', 'सन्तान' और 'तनय' जैसे शब्दों का प्रयोग किया गया। परिवार और कुटुम्ब एक प्राथमिक समूह होने के साथ-साथ समाज की मूल इकाई भी थे। इसमें पति-पत्नी, माता-पिता, भाई-बहन, पुत्र-पुत्री आदि सदस्य शामिल होते थे, जिनका आपस में रक्त संबंध होता था। परिवार का यह संगठन न केवल समुदाय और समाज को विकसित करता था, बल्कि उसके सांस्कृतिक जीवन को भी पुष्पित करता था। आमतौर पर परिवार में तीन पीढ़ियों के लोग एक साथ रहते थे। शतपथ ब्राह्मण में पिता, पितामह और प्रपितामह का उल्लेख इस तीन-पीढ़ी वाली परंपरा को दर्शाता है। बेटे और पोतों के लिए 'तोकं-तनंय' जैसे शब्द भी इसी संयुक्त परिवार की प्रथा का समर्थन करते हैं। 'कुल' कहलाने वाले ये परिवार बड़े और संरचित होते थे, जिनका उल्लेख परवर्ती गृह्यसूत्रों में भी मिलता है।

शतपथ ब्राह्मण में पति-पत्नी के प्रेम और संबंध का एक सुंदर उदाहरण मिलता है, जिसमें कहा गया है कि "सच्चाई पति है और विश्वास पत्नी, मन पति है और वाणी पत्नी, जहां पति है वहां पत्नी है।" यह उद्धरण दांपत्य जीवन में संतुलन, विश्वास और परस्पर सहयोग को दर्शाता है।

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, पत्नी की प्राप्ति से ही मनुष्य में पूर्णता आती है। इसमें कहा गया है:

'तस्मात्पुरुषो जायां वित्त्वा कृत्स्नतरमिवात्मानं मनयते।' अर्थात्, पति अपनी पत्नी के साथ ही आधा और पूर्ण होता है। शतपथ ब्राह्मण में भी इसी विचार को दोहराया गया है कि बिना पत्नी के मनुष्य संतान प्राप्त नहीं कर सकता और जब पत्नी प्राप्त होती है, तभी वह पूर्ण होता है; अन्यथा वह अपूर्ण रहता है।

इसी प्रकार, पुरूरवा और उर्वशी के संवाद में भी दंपत्ति के अटूट और अनिवार्य संबंध का उल्लेख मिलता है। यह दर्शाता है कि वैदिक दृष्टि में पति और पत्नी केवल जीवन साथी नहीं, बल्कि एक-दूसरे की आधा हिस्सा और जीवन के सभी पक्षों में सहयोगी होते हैं।

कात्यायन श्रौतसूत्र में सोमयज्ञ करने वाले यजमानों के लिए पिछले दस पीढ़ियों के पितामहों के नाम लेकर प्रसर्पण का विधान है, जबकि शतपथ ब्राह्मण में पिता, पितामह और प्रपितामह के पश्चात 'पितर्' शब्द का प्रयोग किया गया। यह परंपरा

परिवार में दांपत्य और वंशवृद्धि के महत्व को स्पष्ट करती है।

ऐतरेय ब्राह्मण में पत्नी को 'सखा' कहा गया है, जबकि शतपथ ब्राह्मण में उसे पति की आधी (अर्धांगिनी) माना गया है। इस दृष्टि से बिना विवाह किए और संतान उत्पन्न किए व्यक्ति पूर्ण नहीं होता। वैदिक ग्रंथों में विवाह का उद्देश्य केवल संतानोत्पत्ति और परिवार के निर्माण से जुड़ा था; रति-सुख को मुख्य उद्देश्य नहीं माना गया।

तैत्तिरीय, कौषीतकी और ताण्ड्य ब्राह्मणों में विवाह संबंधी नियमों का भी उल्लेख है। सगोत्र विवाह वर्जित था और देव-विवाह को श्रेष्ठ माना जाता था। ताण्ड्य ब्राह्मण में श्यैत और नैधस् सामों के विवाह को देव-विवाह के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

ब्राह्मण समाज में विवाह द्वारा पुरुष और स्त्री जीवन भर के लिए जुड़ते थे, जिसे पाणिग्रहण संस्कार कहा गया। शतपथ ब्राह्मण में विवाह संस्कार की 'सप्तपदी' क्रिया का उल्लेख मिलता है। विवाह में गोत्र की दूरी का पालन करना आवश्यक था और इसका वैज्ञानिक आधार भी बताया गया। विवाह का मुख्य उद्देश्य संतानोत्पत्ति था।

ब्राह्मण काल में पति-पत्नी को दाने के दो हिस्सों की तरह माना गया, जिनकी संयुक्त स्थिति ही उन्हें पूर्ण बनाती थी। मित्रों के साथ भी परिवार जैसा संबंध रखा जाता था और विश्वासघात की निंदा की गई। तैत्तिरीय संहिता में पत्नी को मित्र और यज्ञ में पति की सहभागी माना गया। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार पत्नी को 'जाया' इसलिए कहा गया कि पति उसमें पुत्र के रूप में जन्म पाता है, जबकि शतपथ ब्राह्मण में पत्नी यज्ञ में पति का सहयोग करती है। अपत्नीक व्यक्ति यज्ञ में भाग लेने योग्य नहीं माना जाता था।

ऐतरेय ब्राह्मण से ही पत्नी के लिए 'भार्या' शब्द प्रचलित था। गृहिणी के रूप में उसे 'जाया', 'जनी' और 'पत्नी' कहा जाता था। पति का प्रेम पाने वाली 'जाया', संतान की माता 'जनी' और पति की सहकर्मिणी 'पत्नी'—ये तीनों शब्द एक ही भार्या की विभिन्न अवस्थाओं को दर्शाते हैं। शतपथ ब्राह्मण में नियमित रूप से 'पत्नी' शब्द का प्रयोग किया गया है और उसे पति की अर्धांगिनी माना गया। पत्नी सम्मान और सहानुभूति की पात्र थी।

शतपथ ब्राह्मण में पतिव्रता होने का महत्व भी स्पष्ट किया गया है। उदाहरण स्वरूप, श्यात पुत्री सुकन्या कहती है कि "मेरे पिता ने मुझे जिस व्यक्ति को विवाह में दे दिया है, जीवित रहते मैं उसका उपहास नहीं कर सकती।" इसके अनुसार स्त्री समाज में पुरुष के अधीन होती थी।

जैसा कि समाज का आधार परिवार है, वैसे ही परिवार की आधारभूत इकाई नारी है। किसी समाज की सांस्कृतिक स्थिति और इतिहास को समझने के लिए नारी की स्थिति और उसकी भूमिकाओं का ज्ञान आवश्यक है। शतपथ ब्राह्मणकालीन नारी का

स्वरूप और समाज में उसका स्थान इसे समझने में मदद करता है।

शतपथ ब्राह्मण में यज्ञानुष्ठान के निर्देश यह संकेत करते हैं कि यज्ञ में पति और उसकी एक पत्नी की उपस्थिति आवश्यक है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, मनुष्य तब तक अधूरा है जब तक वह विवाह कर संतान उत्पन्न नहीं करता। ब्राह्मण ग्रंथों में वैवाहिक जीवन और संतानोत्पत्ति का महत्व बार-बार बताया गया है।

उद्धरणों के अनुसार, पत्नी पति की अर्धांगिनी है। इसलिए पुरुष तब तक पूर्ण नहीं होता जब तक उसे धर्मपत्नी प्राप्त नहीं होती। पति और पत्नी दोनों मिलकर ही जीवन में पूर्णता और सार्थकता प्राप्त करते हैं। यही विचार ऐतरेय ब्राह्मण में भी स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया है।

'पत्नी' शब्द की व्युत्पत्ति से यह स्पष्ट होता है कि पत्नी वह है जो यज्ञ और उसके फल में पति के साथ भागीदारी करती है और विशेष परिस्थितियों में अकेले भी यजन-कार्य करने में सक्षम होती है। इसी संयुक्त कर्तव्य के कारण उसे सहधर्मिणी और पाणिगृहीतिका कहा गया और शास्त्रों द्वारा अर्धांगिनी की पद्वी प्रदान की गई। उसका प्रमुख कर्तव्य वंशवृद्धि और संतानोत्पत्ति था।

शतपथ ब्राह्मण में नारी के कई रूपों का उल्लेख है, लेकिन उसका वास्तविक स्वरूप 'पत्नी' ही माना गया। ऋग्वेद में जहाँ स्त्री के 'जाया' और 'गृहिणी' रूप की प्रशंसा की गई, वहाँ शतपथ ब्राह्मण में उसका 'पत्नी' रूप अधिक प्रमुख और मुखरित है। पति और पत्नी का संयुक्त जीवन समाज द्वारा स्वीकार्य स्वरूप था। पति को स्त्री की प्रतिष्ठा माना जाता था। ब्राह्मण काल में पत्नी का कर्तव्य था कि वह पति की सेवा निष्ठा और प्रेम से करे।

उस समय स्त्रियाँ यज्ञ में भाग लेती थीं और नृत्य-संगीत में भी उनकी रुचि थी। सामगान स्त्रियों का विशेष कार्य माना गया और अश्मेध यज्ञ के कुछ प्रसंगों में प्रेमियों वाली नर्तकी का भी उल्लेख मिलता है।

ब्राह्मणकालीन समाज में माना जाता था कि बिना पत्नी के पुरुष स्वर्ग नहीं जा सकता। पत्नी को पुरुष का अर्धांगिनी माना गया और वह पति के साथ प्रत्येक श्रेष्ठ कार्य, विशेषकर यज्ञ में अनिवार्य रूप से भाग लेती थी। अपत्नीक व्यक्ति यज्ञ करने में अयोग्य माना जाता था और समाज में उसकी हेय दृष्टि होती थी। तैत्तिरीय ब्राह्मण में विवाह को यज्ञ कहा गया है और जिसके पास पत्नी नहीं है, वह अपूर्ण माना गया।

पत्नी के लिए 'भार्या' शब्द का प्रयोग भी मिलता है। वृहदारण्यक उपनिषद में याज्ञवल्क्य की दो पत्नियों को भार्या कहा गया, जबकि शतपथ ब्राह्मण में पति को 'भर्तृ' कहा गया, जो इसी अर्थ को पुष्ट करता है।

पुत्र को भी समाज में अत्यधिक महत्व दिया गया। ऐतरेय ब्राह्मण में पुत्र पिता

के लिए आलोक और संसार सागर पार करने की साधना कहा गया है। पुत्रविहीन व्यक्ति का समाज में कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं था। तैत्तिरीय ब्राह्मण में पुत्र को दूसरे लोक का निर्माणकर्ता कहा गया और संन्यास की निंदा करते हुए पुत्रोत्पादन को सर्वोच्च धर्म माना गया।

ब्राह्मणकालीन समाज में विवाह के बंधन को अत्यंत दृढ़ माना जाता था। एक बार विवाह होने के बाद स्त्री जीवनभर पति के साथ रहती थी। शर्यात-पुत्री सुकन्या कहती है कि "मेरे पिता ने मुझे जिसे दे दिया है, उसे जीवनपर्यंत नहीं छोड़ूंगी।" तैत्तिरीय ब्राह्मण के अनुसार, विवाह के बाद ही पुरुष पूर्ण माना जाता है, क्योंकि पत्नी उसकी आधी है।

स्त्रियों का सौंदर्य और शृंगार उनके जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा था। वे आभूषण पहनती थीं—जैसे रुक्म (स्वर्ण का वृत्ताकार आभूषण), रुक्मपाश (सोने की जंजीर), कण्ठाभरण, और मणि के सूत्र। विवाह और उत्सव के अवसर पर वे पुष्प-आभूषण भी पहनती थीं। उनकी केश-सज्जा में लम्बे बाल, माँग, जूड़ा और मुकुट जैसी शैलियाँ शामिल थीं। दर्पण का प्रयोग उनके श्रृंगार में अनिवार्य था और समृद्ध घरों में सोने में मढ़े दर्पण प्रयुक्त होते थे। स्त्रियाँ साही के काँटों से आँखों में अंजन लगाती थीं।

वस्त्रों की दृष्टि से, स्त्री और पुरुष सूती, ऊनी और रेशमी वस्त्र पहनते थे। शतपथ ब्राह्मण में बताया गया है कि सभ्य व्यक्ति को किसी न किसी प्रकार के वस्त्र पहनना आवश्यक है। इस प्रकार, विवाह, शृंगार और वस्त्र-सज्जा के माध्यम से स्त्री का सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व स्पष्ट होता है।

ब्राह्मण ग्रंथों में वस्त्रों के लिए सबसे अधिक प्रयुक्त शब्द 'वासन्' है। शतपथ ब्राह्मण में शात्मति पौधे से सूती वस्त्र बनाने का संकेत मिलता है। भेड़ की ऊन से बने वस्त्र, जिन्हें 'कोमल' कहा जाता था, और रंगविहीन ऊनी वस्त्र ('पांडव') भी प्रचलित थे। धार्मिक अवसरों पर, जैसे अभिषेक में, पत्नी कुश से बने वस्त्र पहनती थी। रेशमी वस्त्र भी धारण किए जाते थे, जिनमें 'ताप्र्य' और त्रिपाण शामिल थे। मृग या अज के चमड़े के वस्त्र ('अजिन्-वासिन') का प्रयोग भी होता था।

शतपथ ब्राह्मण में अधिवास, चण्डातक, प्राचीनावीत और उष्णीष जैसे विभिन्न परिधानों का उल्लेख है। अधिवास ऊपरी परिधान का प्रतीक था और राजा संस्कारों में कई परिधानों को क्रमशः पहनता था। चण्डातक स्त्रियों का भीतरी वस्त्र था। प्राचीनावीत यज्ञोपवीत से संबंधित था और उष्णीष का रंग प्रायः लाल होता था। ताण्ड्य ब्राह्मण में 'वारासी' शब्द का उल्लेख है, जो एक विशेष प्रकार की प्राकृतिक घटकों से बनी साड़ी को दर्शाता है। इस प्रकार, ब्राह्मणकालीन समाज में वस्त्रों की विविधता और समृद्धि स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है।

'वासस्' का अर्थ सूती वस्त्र है। वस्त्र निर्माण में ताने को 'पर्यास', बाने को

‘अनुच्छाद’, धागे को ‘तन्तु’, बीच के छिद्रों को ‘आरोका:’ और किनारे को ‘प्रघात’ कहा जाता था। कमर पर वस्त्र कसने को ‘नीवी’ कहते थे। पैरों को ठंड और गर्मी से बचाने के लिए ‘उपानह’ धारण किए जाते थे, जो मृग या वराह के चमड़े से बने होते थे।

ब्राह्मण समाज में विवाह और पुत्रोत्पत्ति को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, विवाह कर पुत्र उत्पन्न करने के बाद ही व्यक्ति पूर्ण समझा जाता था। यज्ञ और अन्य धार्मिक कार्यों में पुत्र का होना अनिवार्य था।

राजा के वैभव में उसकी चार पत्नियों का विशेष महत्व था: महिषी, बाबाता, परिवृक्ता और पालागली। प्रत्येक रानी के लिए विशेष श्रेणी की महिलाएँ और राजकन्याएँ नियुक्त की जाती थीं। महिषी सबसे प्रमुख और सम्मानित होती थी, जिसे पृथ्वी के समकक्ष स्थान दिया जाता था। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार प्रत्येक राजा को चार पत्नियाँ रखने का अधिकार था, जो अश्वमेध के अवसर पर उपस्थित रहती थीं। ऐतरेय ब्राह्मण में भी कहा गया है कि पुरुष की कई पत्नियाँ हो सकती हैं, लेकिन एक स्त्री के कई पति नहीं हो सकते।

ब्राह्मणकालीन समाज में रानियों में महिषी का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण था। वह प्रशासनिक और सामाजिक दृष्टि से प्रमुख होती थी। वाजपेय यश के अवसर पर महिषी राजा के साथ सिंहासनारोहण करती थी। स्त्रियों के लिए विशेष कक्ष बनाए जाते थे जिन्हें पत्नीशाल कहा जाता था। राजस्थान के पुराने मकानों में आज भी ‘वाळ्’ नामक कक्ष होता है जहाँ महिलाएँ विश्राम करती थीं। अतिथि के लिए भी अलग कक्ष और भोजन का प्रबंध होता था।

सांस्कृतिक आदर्शों के अनुसार, अतिथि को भोजन खिलाए बिना कोई घर से बाहर नहीं जाता था। अतिथि के सम्मान में विशेष भोजन और उपहार देने की परंपरा थी। संयुक्त परिवार की परंपरा का टूटना शतपथ में नहीं दिखता। बच्चों में बड़ों के प्रति श्रद्धा और उचित व्यवहार को समाज का आदर्श माना जाता था। चारों वर्णों के व्यक्तियों के लिए विशेष सम्बोधन प्रचलित थे। सेवा करने वाले को नम्र और लघु भाव रखते हुए सेवा में सुख प्राप्त होता था। अपने से श्रेष्ठ व्यक्ति के आगमन पर घर की सफाई कर सजाना और उच्च स्थान पर बैठे व्यक्ति के लिए सम्मान दिखाना समाज के नैतिक और सांस्कृतिक मानदंडों का हिस्सा था।

ब्राह्मणकालीन समाज में पुत्र के लिए ‘वीर’ और ‘पुत्र’ शब्दों का प्रयोग होता था, और स्नेह के भाव को व्यक्त करने के लिए ‘पुत्रक’ कहा जाता था। पुत्री को ‘दुहिता’ कहा जाता था। पति का बड़ा भाई ‘ज्येष्ठ’ कहलाता था।

नारी के लिए ‘अबला’ शब्द का प्रयोग नहीं मिलता, किन्तु उसकी दैहिक शक्तिहीनता को माना जाता था। इसके बावजूद स्त्री को ‘श्री’ सम्बोधन द्वारा अत्यधिक

सम्मान प्राप्त था। इस सम्मान का मूल स्त्री की प्रजनन शक्ति में निहित था। स्त्री को 'अम्बा' कहा गया और माँ के रूप में उसका व्यक्तित्व वात्सल्यपूर्ण माना गया।

परिवार या कुल केवल सामाजिक जीवन की इकाई नहीं, बल्कि समाज की आधारशिला था। जन्म से मृत्यु तक सम्पूर्ण जीवन पारिवारिक संगठन के अन्तर्गत संचालित होता था। संक्षेप में, ब्राह्मण ग्रंथों में नारी और परिवार की स्थिति वैदिक काल की अपेक्षा अधिक संगठित, संरक्षित और सम्मानित रूप में प्रतिपादित हुई है।

नारी की सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक स्थिति

शतपथ ब्राह्मण में स्त्री को पुरुष का अर्धांगिनी माना गया है। पत्नी को पति के भोजन के बाद ही भोजन करने की अनुमति थी और पति के प्रश्न का सही उत्तर न देने वाली स्त्री प्रशंसनीय मानी जाती थी।

प्राचीनकाल में स्त्रियों के लिए शिक्षा का विधान भी था। उन्हें यज्ञोपवीत, वेदस्पर्श और सावित्री-मंत्रोच्चारण का अधिकार था। हारीत-संहिता के अनुसार, माधवाचार्य के मत से स्त्रियों का विवाह उपनयन के पश्चात् होना चाहिए, जिससे यह सिद्ध होता है कि विवाह के लिए पुरुष और नारी दोनों को शिक्षित होना आवश्यक था।

यज्ञ के समय पत्नी को वैदिक मंत्रों का उच्चारण करना पड़ता था। मंत्र धीमे और स्पष्ट उच्चारण में होते थे, जिन्हें उन्हें अच्छी तरह याद रखना आवश्यक था। उच्च वर्ग की स्त्रियाँ जनेऊ पहनकर मंत्र पढ़ती थीं और उन्हें वेदों का अध्ययन करने की स्वतंत्रता थी। ऐतरेय ब्राह्मण में कुमारी गन्धर्व गृहीता का उल्लेख है, जो विदुषी और वक्तृत्व में प्रवीण मानी जाती थी।

शतपथ ब्राह्मण में माता द्वारा पुत्रोत्पत्ति और पुत्र के पालन-पोषण का उल्लेख मिलता है। स्त्री का उपनयन संस्कार और ब्रह्मचर्य जीवन स्पष्ट रूप से उल्लिखित हैं। शतपथ के अनुसार यज्ञ में पति के साथ बैठने के लिए पत्नी का उपनीत होना आवश्यक था। तैत्तिरीय ब्राह्मण में यह कहा गया है कि यदि विवाह के समय पत्नी का व्रतोपनयन नहीं हुआ हो, तो उसे बाद में संपन्न कर यज्ञ में पति के साथ बैठाना चाहिए। धार्मिक दृष्टि से पत्नी, पति के दायों की उत्तराधिकारी होती थी। ब्रह्मचर्य द्वारा ऋषियों का, यज्ञ द्वारा देवताओं का और संतान द्वारा पितरों का ऋण वह चुकाती थी। शक्ति-यज्ञ में पत्नी की उपस्थिति अनिवार्य थी; उसकी अनुपस्थिति में पुरुष के धार्मिक कार्य पूर्ण नहीं माने जाते थे। इस काल में कुछ स्त्रियाँ आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत पालन करती थीं या गृहस्थ जीवन का परित्याग कर संन्यासिनी बन जाती थीं। विदुषी स्त्रियाँ, जैसे गंधर्व-गृहीता और गार्गी, स्वतंत्र रूप से संन्यासिनी के रूप में विचरण करती थीं और धार्मिक, सामाजिक तथा शिक्षाप्रद कार्यों में सक्रिय रहती थीं।

ब्राह्मण समाज में सोलह-सत्रह वर्ष की आयु तक शिक्षा प्राप्त करने वाली

कन्याओं को 'सद्यवधू' और आजीवन शिक्षा प्राप्त करने वाली कन्याओं को 'ब्रह्मवादिनी' कहा जाता था। शतपथ ब्राह्मण से ज्ञात होता है कि याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी सांसारिक सुख–भोग की ओर आकर्षित नहीं थी, बल्कि उसका ध्यान अध्यात्म–चिन्तन और ब्रह्मविद्या में केंद्रित था। जब याज्ञवल्क्य ने अपनी सम्पत्ति दोनों पत्नियों में बांटने का प्रयास किया, तो मैत्रेयी ने कहा कि भौतिक वस्तुएँ मुझे अमरत्व नहीं देंगी, अतः मुझे केवल ज्ञान ही प्रदान कीजिए। इससे उसकी विदुषी और अध्यात्म–प्रिय प्रवृत्ति स्पष्ट होती है।

ब्राह्मणकाल में स्त्रियों को वैदिक मंत्रों का अध्ययन करने का अधिकार था और वे धार्मिक शिक्षा में सक्रिय भागीदारी रखती थीं। इसके अतिरिक्त, स्त्रियाँ व्यावहारिक और व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करती थीं। ललित कलाओं जैसे गायन, वादन और नृत्य का अभ्यास भी स्त्रियों द्वारा किया जाता था। ब्राह्मण ग्रंथों में यह उल्लेख है कि गायन और नृत्य स्त्रियों के आनंद का साधन थे, न कि पुरुषों के। यज्ञों के समय स्त्रियों को सस्वर पाठ करने का दायित्व सौंपा जाता था और उद्गाता अपने कार्यों को अपनी पत्नियों द्वारा संपन्न कराते थे।

ब्राह्मणकाल में स्त्रियों का मुख्य व्यवसाय वस्त्र निर्माण और सजावट था। कपड़ों पर कढ़ाई करने वाली स्त्री को 'पेशस–कारी' कहा जाता था। अधिकांश स्त्रियाँ इसे श्रृंगार के लिए करती थीं। शतपथ और तैत्तिरीय ब्राह्मण में इसका प्रमाण मिलता है।

स्त्रियों का कार्यक्षेत्र पुरुषों की तुलना में छोटा था—सूत और ऊन की कताई, बुनाई, सिलाई और कढ़ाई उनके प्रमुख काम थे। वैदिक साहित्य में उन्हें 'वयित्री' कहा जाता था और कुछ कलात्मक व तकनीकी कार्यों के लिए अलग नाम जैसे रजयित्री, कन्टकी–कारी और बिदल–कारी प्रयोग होते थे।

ब्राह्मण ग्रन्थ, विशेषकर शतपथ ब्राह्मण और तैत्तिरीय ब्राह्मण, नारी की स्थिति पर गहन प्रकाश डालते हैं। इन ग्रन्थों में स्त्रियों को धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक अधिकारों में वैदिक परम्परा के समान ही सम्मानजनक स्थान दिया गया है।

यज्ञाधिकार और उपनयन :– ब्राह्मण ग्रन्थों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि स्त्री भी यज्ञ की अधिकारी है और उसे वेदाध्ययन का अधिकार है। यज्ञ में सहभागिता के लिए उसका उपनयन संस्कार अनिवार्य बताया गया है। तैत्तिरीय ब्राह्मण में उल्लेख है कि यदि विवाह से पूर्व पत्नी का उपनयन न हुआ हो, तो विवाह के बाद उसका 'व्रतोपनयन' कराकर ही उसे पति के साथ यज्ञ में बैठाना चाहिए। इस व्यवस्था से यह स्पष्ट होता है कि स्त्री को वैदिक संस्कारों में समान महत्व प्राप्त था।

पत्नी की यज्ञ में अनिवार्यता :– शतपथ ब्राह्मण और अन्य ग्रन्थों में कहा गया है कि पत्नी के बिना यज्ञ अपूर्ण है। अश्वमेध, राजसूय, वरुणाग्रह और वाजपेय जैसे

महत्त्वपूर्ण यज्ञों के आरम्भ से अंत तक पत्नी की उपस्थिति आवश्यक मानी गई है। यज्ञीय अनुष्ठानों में पत्नी केवल दर्शक नहीं होती थी, बल्कि मन्त्रपाठ, वेदी-निर्माण तथा अन्य विधियों में पति का सहयोग करती थी। इस प्रकार पत्नी धार्मिक जीवन में सक्रिय सहभागी थी।

स्त्री की गरिमा और संरक्षण :- शतपथ ब्राह्मण में स्त्री-हत्या को ब्राह्मण-हत्या के समान ही गंभीर अपराध माना गया है। कारण यह है कि स्त्री को 'श्री' अथवा करुणा की देवी का अवतार माना गया है। इससे यह बोध होता है कि स्त्री को समाज में विशेष आदर और संरक्षण प्राप्त था।

विवाह और अनुलोम विवाह की प्रथा :- ब्राह्मण ग्रन्थों में विवाह को भी एक यज्ञ माना गया है। विवाह से सम्बन्धित अनेक नियम और उदाहरण इन ग्रन्थों में वर्णित हैं। विशेषकर अनुलोम विवाह की परंपरा दिखाई देती है- जैसे ब्राह्मण पुरुष का क्षत्रिय कन्या से विवाह, क्षत्रिय पुरुष का वैश्य कन्या से विवाह, और वैश्य पुरुष का शूद्र कन्या से विवाह। शतपथ ब्राह्मण में ऋषि च्यवन और क्षत्रिय कन्या सुकन्या का विवाह इसका उदाहरण है। इसी प्रकार अन्य ग्रन्थों में भी ब्राह्मण ऋषियों और राजकन्याओं के विवाह की घटनाएँ उल्लिखित हैं।

माता-पुत्र संबंध :- शतपथ ब्राह्मण में माता और पुत्र के सम्बन्ध को सबसे निकट और प्रिय माना गया है। यह तथ्य उस समय की पारिवारिक संरचना और मातृत्व की उच्च प्रतिष्ठा को दर्शाता है। ऐतरेय ब्राह्मण में वधू के लज्जाभाव और स्त्री के शील-संकोच का भी उल्लेख मिलता है, जो उस समय के पारिवारिक और सामाजिक संस्कारों का संकेत है।

स्त्री की सभा और शिक्षा में भागीदारी :- ऐतरेय ब्राह्मण में 'सभावती' शब्द का प्रयोग स्त्री के लिए किया गया है, जिससे यह सिद्ध होता है कि स्त्री को सभा में बोलने और विचार व्यक्त करने का अधिकार था। गन्धर्वगृहीता जैसी विदुषी स्त्रियों द्वारा विद्वानों की सभा में अध्यात्म विषयक भाषण देने का उल्लेख भी मिलता है। इससे ज्ञात होता है कि स्त्रियां केवल धार्मिक अनुष्ठानों तक ही सीमित नहीं थीं, बल्कि शिक्षा, विचार-विमर्श और सार्वजनिक जीवन में भी उनका योगदान था।

राजपरिवार की स्त्रियाँ :- ब्राह्मण ग्रन्थों से यह भी स्पष्ट होता है कि राजाओं की पत्नियों के लिए परदा-प्रथा प्रचलित नहीं थी। वे अपने पतियों के साथ स्वतंत्र रूप से भ्रमण कर सकती थीं और सामाजिक जीवन में भाग ले सकती थीं। इससे यह भी ज्ञात होता है कि उच्च वर्ग की स्त्रियां सामाजिक जीवन में सक्रिय और सम्मानित स्थान रखती थीं।

सामगान और नृत्य में भी स्त्रियों की भूमिका महत्वपूर्ण थी। वे गीत गाती और नृत्य करती थीं, जिससे उनकी कला और दक्षता प्रकट होती थी।

तैत्तिरीय ब्राह्मण में विभिन्न व्यवसायों से जुड़ी स्त्रियों का उल्लेख मिलता है। टोकरी बनाने वाली 'बिदलकारी', कांटों का काम करने वाली 'कन्टकीकारी', सिलाई-कढ़ाई करने वाली 'पेशसकारी', वस्त्र रंगने वाली 'रजयित्री', सौन्दर्य प्रसाधन बनाने वाली 'अन्जनीकारी' और म्यान बनाने वाली 'कोशकारी' का वर्णन हुआ है। चटाई बनाना तथा पत्तों से सजावट करना भी मुख्यत: स्त्रियों का काम था, यद्यपि इसमें पुरुष भी भाग लेते थे। इससे स्पष्ट होता है कि कुछ व्यवसाय विशेष रूप से स्त्रियों से जुड़े थे और जाति-आधारित भी थे।

सिलाई-कढ़ाई और बुनाई के अतिरिक्त स्त्रियां कृषि व पशुपालन में भी सहयोग करती थीं। शतपथ ब्राह्मण में 'स्त्री' के साथ 'खुरपी' का उल्लेख इसी का संकेत है।

विदेहराज जनक की सभा में गार्गी जैसी विदुषी स्त्रियों का उदाहरण मिलता है, जिन्होंने अपनी विद्वता से पंडितों को चकित किया। विदुषी स्त्री को वाणी और ज्ञान में प्रवीण माना गया।

समाज में विधवाओं की स्थिति भी उल्लेखनीय थी। कुछ विधवाएं पुनर्विवाह करती थीं, जबकि कुछ आजीवन अविवाहित रहती थीं। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार पत्नी की मृत्यु के बाद भी पुरुष यज्ञ कर सकता था क्योंकि 'श्रद्धा' को पत्नी के तुल्य माना गया है।

ऐतरेय ब्राह्मण और शतपथ ब्राह्मण में दासियों के उल्लेख से ज्ञात होता है कि उस समय समाज में दास-प्रथा प्रचलित थी। राजाओं द्वारा पुरोहितों को हजारों दासियां और हाथी दक्षिणा स्वरूप देने की परंपरा थी। उपनिषदों में भी राजा और विद्वानों के पास दासियों की उपस्थिति का उल्लेख मिलता है।

शतपथ ब्राह्मण में अश्वमेध यज्ञ के समय चार सौ दासियों का महिषी की सेवा करना वर्णित है, जिससे स्पष्ट होता है कि स्त्रियां राजपरिवार और यज्ञ-परंपरा से जुड़ी रहती थीं।

धार्मिक दृष्टि से अविवाहित पुरुष को यज्ञ का अधिकारी नहीं माना गया। तैत्तिरीय और जैमिनीय ब्राह्मण में यह स्पष्ट किया गया है कि यज्ञ और अन्य धार्मिक कार्य पति-पत्नी दोनों के संयुक्त सहयोग से ही पूर्ण होते हैं।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि ब्राह्मण ग्रन्थों में नारी को केवल घरेलू भूमिका तक सीमित न मानकर, यज्ञ और शिक्षा में भी पुरुषों के समान अधिकार दिया गया।

नारी के अधिकार एवं कर्त्तव्य

शतपथ ब्राह्मण में स्त्रियों को यज्ञ से बाहर नहीं रखा गया, बल्कि उन्हें यज्ञ का

अधिकार प्राप्त था। उनकी अनुपस्थिति में यज्ञ को अपूर्ण माना गया है। वे न केवल मन्त्रों का उच्चारण करती थीं, बल्कि वेदी निर्माण में भी पति की सहयोगी होती थीं।

यज्ञ–क्षेत्र में 'पत्नीशाला' का उल्लेख स्त्रियों की सक्रिय भूमिका को दर्शाता है। तैत्तिरीय ब्राह्मण के अनुसार, यदि पत्नी का उपनयन पहले न हुआ हो, तो विवाह के बाद उपनयन कराकर ही उसे यज्ञ में पति के साथ बैठाना चाहिए। इसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण में भी कहा गया है कि स्त्रियां उपनयन संस्कार के बाद ही यज्ञ में भाग ले सकती थीं।

शतपथ ब्राह्मण में याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी का उल्लेख मिलता है, जिसकी रुचि सांसारिक भोगों में न होकर आध्यात्मिक चिन्तन व ब्रह्मविद्या में थी। उसने धन के बजाय ज्ञान को श्रेष्ठ माना।

तैत्तिरीय ब्राह्मण में कहा गया है कि रजस्वला पत्नी के साथ पति द्वारा किया गया यज्ञ अधूरा माना जाता है, क्योंकि उस अवस्था में वह पति के साथ यज्ञ में सम्मिलित नहीं हो सकती थी। शतपथ ब्राह्मण के वाजपेय यज्ञ प्रसंग में पति–पत्नी को एक साथ स्वर्गारोहण का प्रतीकात्मक विधान मिलता है।

ऐतरेय व कौशीतकी ब्राह्मणों से यह भी स्पष्ट होता है कि उस समय स्त्रियां शिक्षिका भी हो सकती थीं। जब कोई स्त्री 'गंधर्वाधिकृत' होती थी, तब उसका वचन सर्वमान्य माना जाता था।

शतपथ ब्राह्मण में बताया गया है कि पुत्र–प्राप्ति से ही पति पितृ–ऋण से मुक्त होता है, इसलिए स्त्री का प्रमुख धर्म विवाह और सन्तानोत्पत्ति माना गया। पुत्रवती स्त्री को सौभाग्यशाली और पुत्रहीन स्त्री को अभागी समझा जाता था।

साथ ही स्त्रियां ऊन और सूत की कताई–बुनाई, कपड़ों की सिलाई जैसे कार्यों में दक्ष थीं। उन्हें उत्तराधिकार में धन प्राप्ति का अधिकार था और धार्मिक कार्यों में भी सम्मानजनक स्थान प्राप्त था।

ब्राह्मण ग्रन्थों के अध्ययन से यह सिद्ध होता है कि इस युग में नारी का स्थान वैदिक काल की भांति ही ऊँचा और प्रतिष्ठित था। वह केवल परिवार की धुरी ही नहीं थी, बल्कि यज्ञों की सह–अधिकारिणी, सभा की भागीदार, शिक्षा की अधिकारी और समाज में आदरणीय थी। विवाह, मातृत्व और गृहस्थ जीवन उसके प्रमुख कर्तव्य थे, किन्तु इनसे परे भी उसे वैचारिक, धार्मिक और सामाजिक अधिकार प्राप्त थे। इस प्रकार, ब्राह्मण ग्रन्थों में नारी का स्वरूप एक ऐसी सशक्त इकाई के रूप में उभरता है जो वैदिक धर्म और समाज की आधारशिला थी।

❑❑❑